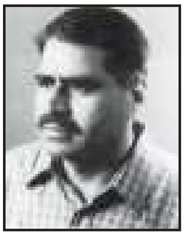

निजी सम्पत्ति एवं आदिवासी परम्परा

हरि राम मीणा

ठेठ आदिम अवस्था की बात करें तो मानव-जाति का जीवन अन्य प्राणियों से भिन्न नहीं था। नर-नारी के सम्बन्ध भावनात्मक न होकर वृत्ति-मूलक (instinctual) थे जो संतान की शैशवकालीन देखभाल तक ही यहां सीमित रहे होंगे। धीरे-धीरे दिलो-दिमाग की गतिविधियों के विस्तार के साथ भावनात्मक सम्बन्ध विकसित हुए और परस्पर आत्मीय सम्बन्धों के आधार पर जीवन साथ-साथ गुजारने की मानसिकता सामने आई। यहां परिवार आरम्भिक स्वरूप में था जिसमें परस्पर निर्भरता जैसे तत्व भी विकसित हुए। संतान एक अमूल्य रचना थी जिसके शैशवकाल में विकसित होने की प्रक्रिया में मां की भूमिका के आधार पर मातृ-सत्तात्मक परिवार की उत्पत्ति हुई। धीरे-धीरे शारीरिक शक्ति व क्षमता के आधार पर पुरुष-वर्चस्व अंकुरित होने लगा। संतान के आरम्भिक काल में मां के साथ निकटता या उस पर निर्भरता एक सहज दशा थी जिसमें संतान के प्रति स्त्री (मां) की ममता नैसर्गिक भाव था न कि वर्चस्व का प्रयास। यह मानव इतिहास का आखेट युग था जिसमें निजी सम्पत्ति की अवधारणा अगर किसी रूप में मानव समुदाय में अंकुरित हुई तो वह स्त्री व संतान पर पुरुष-वर्चस्व के रूप में इंगित होती है न कि किसी भौतिक वस्तु पर अधिकार के रूप में।

उस काल-खण्ड में मनुष्य के सामने सबसे बड़ी समस्या थी पेट भरने की। उस समस्या का समाधान प्रमुख रूप से आखेट में था और गौण रूप में कंद-मूल-फल आदि की तलाश में। घने जंगलों व दुर्गम अंचलों के साथ अगर कहीं मैदानी इलाके थे तो वहां भी हिंसक जानवरों के डर के साये तले जीवन गुजारने की विवशता थी। इसलिए आखेट-कर्म भी सामूहिक गतिविधि थी और सामूहिक गतिविधि से अर्जित किसी भी वस्तु पर स्वामित्व भी सामूहिक होता था। इसलिए आखेट-कर्म से प्राप्त कोई वस्तु भी अस्थाई सम्पत्ति के रूप में खींचतान कर व्याख्यायित कर भी दी जावे तो उसे निजी सम्पत्ति के रूप में नहीं देखा जा सकता।

आखेट-युग में जैसे ही मानव जाति ने बस्तियों में रहने का जीवन आरम्भ किया जो निश्चित रूप से अस्थाई रहा होगा, उस अस्थाई आवास काल-खण्ड में किसी व्यक्ति ने किसी स्थान को सबसे पहले स्वयं का होना घोषित किया और अन्य का प्रवेश कुछ शर्तों के साथ प्रतिबन्धित किया, वहां से निजी सम्पत्ति की अवधारणा सामने आई। ऐसी अवधारणा के विस्तारित स्वरूप ने हमें इस उत्तर आधुनिक युग के उग्र पूंजीवाद तक पहुंचाया है। इसी प्रक्रिया में सम्पदा के निजी सम्पत्ति एवं राज्य या समाज के स्तर पर सार्वजनिक सम्पत्ति का वर्गीकरण दिखाई देता है।

जहां तक निजी सम्पत्ति की अवधारणा की सैद्धांतिकी का सवाल है तो इसे अनेक विचारकों ने अपने-अपने हिसाब से विश्लेषित किया है। ग्रीक दर्शन एवं मध्यकाल के महान दार्शनिक रूसो आदि ने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि मनुष्य की सारी गड़बड़ियों का कारण निजी सम्पत्ति है। इसलिए आदिम अवस्था के सार्वजनिक स्वामित्व के सिद्धान्त को अपनाने से एक बेहतर मनुष्य दुनिया को मिल सकता है, यही उनका

मुख्य तर्क रहा। तेरे-मेरे की भावना से उत्पन्न झगड़ा सारी आफत की जड़ था। अराजकतावादी विचारक प्रूदों की प्रसिद्ध सूक्ति है 'सम्पत्ति चोरी है'। उनके ऐसा कहने के पीछे यह भाव रहा होगा कि पृथ्वी की जो भी सम्पत्ति है वह प्रकृति या ईश्वर के द्वारा पैदा की हुई है। उसके किसी भी अंश पर अगर कोई व्यक्ति कब्जा करने का दावा करता है तो वह एक प्रकार से चोरी है। इसी क्रम में मिखाइल बाकुनिन निजी सम्पत्ति की अवधारणा की जगह सामूहिक स्वामित्व का पक्ष लेते हैं।

क्रोपॉटकिन ने मानव समाज में विसमता का मूल कारण निजी सम्पत्ति को माना है। इसी मत का समर्थन तोलस्तॉय करते हैं। महात्मा गांधी ऐसे ही विचार रखते हैं और निजी सम्पदा की जगह सार्वजनिक स्वामित्व (trustiship) की अवधारणा का प्रतिपादन करते हैं।

इस सम्बन्ध में सबसे महत्वपूर्ण विचार मार्क्सवाद ने दिये हैं जिनका प्रतिनिधित्व एंगिल्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'परिवार व सम्पत्ति' में किया है। निश्चित रूप से आरम्भ में कंद-मूल-फल आदि एवं छोटे शिकारों पर मानव-जीवन आधारित रहा होगा। जैसे-जैसे आखेट के औजारों का आविष्कार हुआ और साथ ही आग की खोज कर ली गई तब जाकर बड़े जानवरों का शिकार किया जाने लगा जिसके लिए पुनः समूह में आखेट आवश्यक था। इसलिए बड़े-बड़े आखेटों पर भी व्यक्तिगत स्वामित्व की बात नहीं थी। समय की यात्रा के साथ चुनिन्दा जानवरों का मांस-भक्षण करने के लिए उन्हें पालतू बनाया जाने लगा ताकि आखेट की मेहनत और खतरों से बचा जा सके, यद्यपि यह पालतूपन आखेट का विकल्प पूरी तरह नहीं बन पाया।

आदि-मानव के गुफा शैल-चित्रों को देखने से जो विषय वस्तु सामने आती है वह आखेट के लायक जानवरों, अन्य हिंसक जीवों तथा पालतू किस्म के प्राणियों तक ही सीमित रही। ये गुफा-चित्र पहाड़ी इलाकों में पाये गये हैं जहां कृषि-कर्म चाहते हुए भी सम्भव नहीं था। कृषि-कर्म के साथ निजी सम्पत्ति की प्रवृत्ति विकसित हुई, जिसकी शुरूआत विभिन्न प्रकार के फल या वनस्पतियों के दानों को खाने के बाद फेंक देने पर पुनः उत्पन्न होने वाले पौधों के ज्ञान से हुई होगी। वह भी शुरू में सार्वजनिक स्वामित्व से निजी स्वामित्व की ओर बढ़ा हुआ कदम होगा।

यहां एक रोचक मिथकीय प्रसंग सामने आता है। भारतीय परम्पराओं के अनुसार प्रारम्भ में प्रमुख देवता वरुण था जिसे सृष्टि संबंधी मिथक के स्तर पर मूल तत्व जल से जोड़ा जा सकता है। तब बड़े जानवरों के आखेट की आवश्यकता हुई ताकि समूह के स्तर पर और पर्याप्त मात्रा में भोजन की व्यवस्था हो सके। इसके लिए शक्तिशाली एवं नेतृत्व क्षमता से भरपूर इन्द्र सामने आता है जो वरुण के वर्चस्व को समाप्त कर देता है। कालान्तर में जब मानवता आखेट युग से कृषि-कर्म की ओर मुड़ी तो इन्द्र का वर्चस्व भी कृष्ण द्वारा समाप्त कर दिया जाता है। इसका बेहतरीन उदाहरण हमारे सामने खाण्डव वन-दहन का है जो पाण्डवों द्वारा कृषि योग्य भूमि तैयार करने के लिए किया गया और जब इन्द्र ने खाण्डव वन में बसी नाग जाति के प्रमुख वासुकी के पक्ष में मित्रवत आकर खाण्डव वन-दहन का विरोध करते हुए भारी वर्षा की जिसके विरुद्ध कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत के नीचे अपने लोगों को सुरक्षित रखा।

कृषि-कर्म के साथ आरम्भ में सामूहिक स्वामित्व के बाद में बंटवारे के आधार पर निजी स्वामित्व की अवधारणा विकसित होती गई। स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध और मातृ-सत्तात्मक परिवारों में नारी के वर्चस्व और पुरुष व संतान पर उसके स्वामित्व को भी निजी सम्पत्ति की अवधारणा से अप्रत्यक्ष रूप से जोड़ा जा सकता है। पुरुष वर्चस्व के साथ यह स्थिति परिवर्तित भी हुई। मिथक शास्त्र की दृष्टि से देखें तो पिता-पुत्री के सम्बन्धों में ब्रह्मा व सरस्वती, भाई-बहन के मध्य यौनाचार की दृष्टि से यम-यमी का प्रसंग तथा मित्र या प्रभावशाली व्यक्ति के स्तर पर श्वेत केतु की मां को उसके पति के सामने परिचित ऋषि द्वारा संभोग के लिए ले जाने के दृष्टान्त हमारे सामने हैं।

सम्पत्ति की अवधारणा पर भारत, मिश्र, यूनान व चीन आदि प्राचीन दर्शनों, हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, ताओ जैसे धर्मों आदि से लेकर तोल्सतॉय व महात्मा गांधी तक का विश्लेषण करने से एक सूत्र सामने आता है कि पृथ्वी की सारी सम्पत्ति ईश्वर या प्रकृति द्वारा सृजित है, इसलिए किसी मनुष्य या मानव समूह का उस पर अधिकार करने का दावा नैतिक व तार्किक दृष्टि से असंगत है। जो दर्शन ईश्वर की अवधारणा में विश्वास करते हैं उनके लिए सम्पत्ति का जन्मदाता ईश्वर तथा जो दर्शन अनीश्वरवादी हैं उनके लिए इस सब की जननी प्राकृतिक शक्ति है। यहां यह कहावत सटीक है 'सबहि भूमि गोपाल की।'

औद्योगिक क्रांति से वर्तमान वैश्वीकरण तक निजी सम्पत्ति की अवधारणा सम्पत्ति को पूंजी तक की यात्रा तक ले आयी। जब सम्पत्ति बाजार में अधिक लाभ कमाने के आशय से पूंजी के रूप में उपयोग में ली जाती है तो यह मानवीय सरोकारों को एक तरफ रखकर केवल स्वार्थ-चाहे वह निजी है या कोरपोरेट- सर्वोपरि हो जाता है। उग्र पूंजीवाद मनुष्य, अन्य प्राणियों व प्रकृति के पक्ष में न होकर विरुद्ध होता है।

हम यात्रा के जिस पड़ाव पर पहुंच चुके हैं वहां से वापस आदिम युग में लौट पाना असम्भव है, लेकिन मनुष्य के पक्ष में जो आदिम

सरोकार रहे उन पर ध्यान देना जरूरी है ताकि पूंजी के वर्चस्व के दुष्प्रभावों से बचा जा सके। कुछ अर्सा तक सर्वोच्च धनाढ्य रहे बिल गेट्स की इस आत्म स्वीकृति से काम नहीं चलेगा कि 'पूंजी को अब मानवीय चेहरे के साथ सामने आना होगा।' इसके लिए हमें उन आदिम-समाजों के दर्शन, संस्कृति व जीवन शैली को पहचानना होगा जो अभी तक प्रकृति व मानवेतर प्राणियों के साथ सह अस्तित्व का जीवन जीने की परम्परा को बचाये हुए हैं। ये आदिम समाज आज के आदिवासी समुदाय हैं जो विश्व के किसी भी अंचल में रह रहे हों, सौ अभावों के बावजूद आदिम सूत्रों को पकड़े हुए हैं। जहां तक निजी सम्पत्ति की अवधारणा का सवाल है तो आदिवासियों ने अभी भी एक तरह से इसे नकारा है चूंकि वनोपज का संकलन, आखेट या कृषि-कर्म की गतिविधियां अभी भी कई जगह सामूहिक रूप से की जा रही हैं। जमीन के किसी टुकड़े पर निजी-स्वामित्व है तो भी श्रम में सामूहिकता देखी जा सकती है। भौतिक वस्तु-संग्रहण की प्रवृत्ति समाज के अन्य घटकों की तुलना में इन लोगों में कम पाई जाती है। जो सहज रूप में मिल गया उसमें संतोष करने का स्वभाव इन लोगों में दिखाई देगा। आर्थिक आय का भौतिक लाभ एवं स्वार्थ इन लोगों की मानसिकता में नहीं दिखाई देगा और यही वजह है कि ये ईमानदार, सहज-भोले हैं, जिन्हें चतुर लोग ठगते रहे हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष में भौतिक दृष्टिकोण से अति पिछड़ी हुई दशा में अण्डमानीय टापुओं में रहने वाले जारवा व सेन्टेनली जैसे आदिवासी समुदाय हैं जिनके जीवन में झांक कर देखा जाये तो हमें यह जानकारी मिलेगी कि उन टापुओं में जंगली सूअरों की तादाद काफी है, यह लोग इनका शिकार करते रहते हैं और खाद्य सामग्री के रूप में उपयोग में लेते रहते हैं। हिरणों की संख्या कम है, उनमें मृत बुजुर्गों की आत्मा का वास मानते हैं और उन्हें सुरक्षित रखते हैं। तीतर व बटेर पर्याप्त मात्रा में हैं जिनका शिकार ये लोग करते हैं। हरा कबूतर (हरियल) अत्यल्प हैं, जिनमें यह लोग अपने होने वाले शिशुओं की आत्मा का वास मानते हैं। समुद्री खाने की बात करें तो नीले रंग की स्टार फिश बिरली हैं, इनमें ये लोग अपनी आदि परी-दादी का रूप देखते हैं, अन्य जो जीव-जन्तु पर्याप्त मात्रा में हैं, उन्हें ये खाते हैं। अभी भी टापुओं के भीतर जो समूह रहते हैं उनमें निजी सम्पत्ति की अवधारणा नहीं है, यहां तक कि झौंपड़ीनुमा घर भी नहीं बनाये जाते। जब कोई स्त्री प्रसव के निकट होती है तो अस्थाई झौंपड़ी बनाई जाती है जिसे प्रसव के कुछ दिनों बाद प्रसूता के चलने-फिरने की स्थिति में आने पर ध्वस्त कर जला दिया जाता है। जंगली जानवरों की तरह ये लोग समूहों में रहते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करते रहते हैं।

एक बहुत ही अद्‌भुत वाकिया यहां प्रस्तुत है। सूनामी के हादसे के बाद अण्डमान व निकोबार द्वीप समूह का एक 15 सदस्यीय आदिवासी प्रतिनिधि मण्डल राहत कार्यो के मसले पर दिल्ली आया था। आदिवासी विकास परिषद से जुड़े कुछ अधिकारियों व सामाजिक कार्यकर्ताओं ने उन्हें रात्रि-कालीन भोज में आंमत्रित किया था। मैं भी संयोग से वहां मौजूद था। जिस घटना का यह जिक्र है वह मुझे प्रतिनिधि मण्डल द्वारा बताई गई। हुआ यूं कि सूनामी से करीब 24 घन्टे पहले जारवा आदिवासी समुदाय के दो युवक पोर्ट ब्लेयर अस्पताल में इलाज के लिए गये थे (उल्लेखनीय है कि अब सेंटेनलीज एवं जारवा समुदाय के कुछ आदिवासियों को छोड़कर ओंग, ग्रेट-अण्डमानी, शोम्फेन व निकोबारी आदिवासी समुदाय धीरे-धीरे मुख्य समाज के निकट आ रहे हैं। इस प्रक्रिया में सबसे पीछे जारवा एवं ठेठ पीछे सेंटेनलीज हैं) उनमें से एक युवक किसी काम से सड़क पर चल रहा था व दूसरा प्रथम मंजिल पर था। जो सड़क पर चल रहा था उस युवक को कुछ आभास हुआ। उसने बैठी हुई मुद्रा में कनपटी सड़क के नीचे कच्ची जमीन पर टिकाई, कुछ देर बाद कुछ अनुभव किया जैसा कि वह पृथ्वी के भीतर से कुछ भांप रहा हो। वह युवक भाग कर प्रथम मंजिल पर मौजूद अपने साथी के पास गया और उससे कुछ बात कही और दोनों पोर्ट ब्लेयर से तुरन्त त्रिरूर टापू गये, जहां उनके अन्य साथी थे, वो भी तब तक ऊंची पहाड़ियों पर चढ़े हुए थे। कुल मिलाकर बात यह सामने आई कि उस युवक की तरह धरती से जुड़े वहां के आदिवासियों ने समय से पूर्व पृथ्वी के भीतर की हलचल को भांप लिया था, वैसे ही जैसे चींटी, चूहे, सरीसृप एवं अन्य जानवर ज्वालामुखी या बाढ़ आने से पहले उस जगह को छोड़कर सुरक्षित आश्रय की ओर चले जाते हैं। यह एक तथ्य है कि अण्डमान के टापुओं में ठीक सी ऊंचाई वाली पहाड़ियां हैं। समय से पूर्व वहां रहने वाले आदिवासी उन पर चढ़ गये थे। फलतः सूनामी से उस अनुपात में मौतें नहीं हुईं जिस अनुपात में निकोबार के द्वीपों में हुई, जहां ऊंची पहाड़ियां नहीं है।

❐❐

31, शिव शक्ति नगर, किंग्स रोड,
अजमेर हाईवे, जयपुर- 302019
मो. नं. 094141 24101